रजि. नं. पी.बी./जे.एल–/0011/2012-14 RNI No. 26281/74

ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

साप्ताहिक
आर्य मर्यादा
आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख साप्ताहिक पत्र

वर्ष–71, अंक : 7, 15/18 मई 2014 तदनुसार 28 बैशाख सम्वत् 2071 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

परिच्छिन्न आत्मा

–ले० स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

अव्यसश्च व्यचसश्च बिलं वि ष्यामि मायया।
ताभ्यामुद्धृत्य वेदमथ कर्म्माणि कृण्महे।। **अ. 19/67/1**

शब्दार्थ–अव्यसः =अव्यापक, परिच्छिन्न (जीवात्मा) **च+च**=आर **व्यचसः**=व्यापक (परमात्मा) के **बिलम्**= भेद को, रहस्य को, ठिकाने को **मायया**= बुद्धि से **वि+स्यामि**= खोलता हूं। **ताभ्याम्**= उन दोनों से अथवा उन दोनों के लिये **वेदम्** = वेद को **उद्धृत्य**= ग्रहण करके **अथ**= इसके अनन्तर **कर्माणि**= कर्मों को **कृण्महे**= हम करते हैं।

व्याख्या–जीवात्मा अथवा अपना–आपा तथा परमात्मा के सम्बन्ध में संसार में बड़ा विवाद है। कई लोग तो इन दोनों की सत्ता ही स्वीकार नहीं करते। जो स्वीकार करते हैं उनमें भी इनके सम्बन्ध में एकमत नहीं हैं। परमात्मा को कोई सातवें आसमान पर, कोई चौथे आसमान पर, कोई क्षीरसागर में और कोई अन्यत्र कहीं बतला कर उसको परिच्छिन्न, अव्यापक, एकदेशी बतला रहा है। एकदेशी अवश्यमेव अल्पज्ञ और अल्प सामर्थ्य वाला होगा, उससे इस विशाल ब्रह्माण्ड की रचना, पालना, संहारणा नहीं हो सकती। इस दोष का निराकरण करने के विचार ही ये मानों वेद में कहा गया है कि वह व्यापक है। जीवन को अव्यापक बतलाया गया है। इन दोनों का भेद, इनका रहस्य ज्ञान से जाना जा सकता है, इसीलिए कहा– **बिलं वि ष्यामि मायया** बुद्धि से, ज्ञान से इन का भेद, रहस्य खोलता हूं।

प्रत्येक पदार्थों के विषय में भी बहुधा विवाद हुआ करते हैं, परोक्ष पदार्थों का तो कहना ही क्या है। किन्तु भगवान ने कृपा करके जो ज्ञान दिया है, उससे काम लो, दोनों के भेद को, ठिकाने को ज्ञान से खोलो। ऋषि ने कहा भी है–

हृदा मनीषा मनसाऽभिक्लृप्तो य एतद्विदुरमृतास्ते भवन्ति।
श्वेता 4/17

हृदय से, बुद्धि से तथा मन से ही इसका बोध होता है। जो इस बात को जान लेते हैं, वे अमृत हो जाते हैं, मौत से निर्भय हो जाते हैं।

जिन्होंने उस अविनाशी, अमर को जान लिया उन्हें मृत्यु भय कहां रहा? किन्तु उसे जानने के लिये मन, बुद्धि तथा हृदय सभी का सहयोग होना चाहिये। मन और बुद्धि, मनन और अध्यवसाय उनका निश्चय कराएंगे। मस्तिष्क को तर्क चुप करा सकता है किन्तु सूक्ष्म भावनाओं के धनी हृदय ने यदि उसे धारण न किया तो फिर नास्तिकता के गहरे गर्त्त में गिरना होगा। इसलिये हृदय को भी साथ मिलाओ। ऋषि श्वेताश्वतर ने बहुत स्पष्ट शब्दों में कहा–

अंगुष्ठमात्रो रवितुल्यरूपः संकल्पाहंकारसमन्वितो यः ।
बुद्धेर्गुणेनात्मगुणेन चैव आराग्रमात्रो ह्यपरोऽपि दृष्टः ।।
5/7

जो ज्ञानगम्य है, सूर्य समान तेजस्वी है, संकल्प करता है, अहंकारवान है, वह अत्यन्त सूक्ष्म आत्मा अपर है, वह बुद्धि तथा अपने गुणों से दीखता है।

सचमुच वह अपर है पर तो परमात्मा है। बुद्धि के गुण आत्मा का ज्ञान करा रहे हैं। इच्छा–द्वेष, सुख–दुख, ज्ञान और प्रयत्न, ये आत्मा के गुण आत्मा का अनुमान कर रहे हैं। इस अनुमान से आत्मा को जानकर जो साधनों का अनुष्ठान करता है, उसे आत्मा का साक्षात्कार, प्रत्यक्ष भी होता है, तभी कहा–अपरोऽपि दृष्टः अपर आत्मा के भी दर्शन होते हैं। इन्हीं ऋषिप्रवर ने आत्मा का परिणाम बताया है।

बालाग्रशतभागस्य शतधा कल्पितस्य च।
भागो जीवः स विज्ञेयः स चानन्त्याय कल्पते।। **श्वेता. 5/9**

बाल के अगले हिस्से के सौ टुकड़े कर दिए जाएं उस सूक्ष्म सौवें हिस्से के भी सौ हिस्से कर दिये जाएं उस सूक्ष्म भाग के समान जीव है, किन्तु उसमें सामर्थ्य बहुत है।

महर्षि दयानन्द ने भी कहा है:–

जीव एक सूक्ष्म पदार्थ है जो एक परमाणु में भी रह सकता है, उसकी शक्तियां शरीर में प्राण, बिजली और नाडी आदि के साथ संयुक्त होकर रहती है, उससे सब शरीर का वर्तमान जानता है।

सत्यार्थ प्रकाश, द्वादश समुल्लास

श्वेताश्वतर और दयानन्द दोनों ने यह रहस्य वेद तथा योग द्वारा जाना। अथर्ववेद में कहा है।

बालादेकमणीयस्कमुतैकं नेव दृश्यते।
ततः परिष्वजीयसी देवता सा मम प्रिया।। **अथर्व10/7/25**

एक (जीवात्मा) बाल से भी अधिक सूक्ष्म है और एक (प्रकृति) मानों नहीं दीखती है, उससे अधिक सूक्ष्म और व्यापक जो परमात्मा देवता है, वह मेरी प्यारी है, अर्थात परमात्मा जीव से सूक्ष्म और जीव में व्यापक है। वह सदा असंग रहने वाला है, अतः जीव को उससे प्यार करना चाहिये। कल्याण–अभिलाषी को प्रकृति के प्यार से ऊपर उठ कर परमात्मा से प्रीति लगानी चाहिए। कितना कठिन और कितना सरल है यह कार्य। यथार्थ ज्ञान के बिना यह सिद्ध नहीं होता।

ध्यान दीजिए, पहले वेद, पीछे कर्म अर्थात ज्ञान के बिना कर्म का अनुष्ठान हो नहीं सकता। तभी शास्त्रों में कर्म से पूर्व ज्ञान का नाम आता है।

उत्तरार्ध एक और गम्भीर तत्व का संकेत कर रहा है। ज्ञान का पर्य्यवसान अनुष्ठान है। वह ज्ञान जिसे कर्म में परिणत न किया जा सके, यह ज्ञान जिससे कर्म करने में सहायता न मिले, ज्ञान नहीं है, ज्ञानाभास है। इससे स्पष्ट होता है कि वेद कर्मण्यवाद का पोषक है। कर्मत्याग का नहीं। उचित भी यही है। परिच्छिन्न जीवात्मा कर्म के बिना रह नहीं सकता। वह अपने चहुं ओर के पदार्थ जानना चाहता है इसके लिये उसे गति करनी होती है। गति का नाम ही कर्म है, अर्थात कर्म आत्मा का स्वभाव है।

–स्वाध्याय संदेह से साभार

क्या वेद ईश्वरीय ज्ञान है, तो क्यों ?

-ले० श्री खुशहाल चन्द्र आर्य गोविन्द राम आर्य एण्ड सन्स 180 एम. जी. रोड कोलकाता

क्या वेद ईश्वरीय ज्ञान है ? यह प्रश्न हर चिन्तन शील व मननशील व्यक्ति के विचार में आता है, कि ईश्वर जब निराकार है और अजन्मा है तो उसने कैसे तो जन्म लिया होगा और कैसे वेद ज्ञान को सुनाया होगा। वेद ज्ञान सुनाने के लिए तो ईश्वर को जन्म भी लेना पड़ा होगा और साकार रूप में मुख से सुनाया भी होगा। बिना मुख तो कोई व्यक्ति कुछ भी सुना नहीं सकता है। किसी ज्ञान को सुनाने के लिए शरीर का होना और मुख का होना बहुत जरूरी है। इसलिए यह ज्ञान ईश्वर का न होकर ऋषि मुनियों का दिया हुआ ज्ञान होना चाहिए। परन्तु वह ज्ञान ईश्वर का ही दिया हुआ है, इस के पीछे कारण यह है कि हम जो सृष्टि देखते है, यह ठीक वैसी ही है जैसा सृष्टि के सम्बन्ध में वेदों में लिखा है। जब सृष्टि को ईश्वर ने बनाया है तो यह जरूरी है कि वेदों को भी ईश्वर ने ही बनाया है। दोनों की एक रूपता यह सिद्ध करती है कि दोनों को ही ईश्वर ने बनाया है। यह सर्व-विदित है कि मनुष्य चाहे कितना भी महान हो, ऋषि-मुनि हो, पर सृष्टि को नहीं बना सकता। सृष्टि को बनाने वाला सर्वज्ञ, सर्वव्यापक और सर्व शक्तिमान होना आवश्यक है। इसलिए ईश्वर में ये तीनों गुण होने से, ईश्वर ने ही यह सृष्टि रची है और ईश्वर ने ही चारों वेदों को बनाया है।

अब प्रश्न उठता है कि ईश्वर ने वेद ज्ञान मनुष्यों को कैसे सुनाया। इसके लिए महर्षि दयानन्द अपने अमर ग्रन्थ ''सत्यार्थ प्रकाश'' में लिखते है कि सृष्टि उत्पन्न करने के बाद यानि पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी आदि बनाने के बाद ईश्वर ने तिब्बत के पठार पर एक कृत्रिम गर्भाशय बना कर उसमें युवा स्त्री-पुरूष पैदा किये जिससे आगे की सृष्टि चलती रहे। इसी समय चार ऋषि जिनकी आत्मा सब से उत्तम थी, जिनके नाम अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा था उनके हृदय में चार वेद जिनके नाम ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद हैं, इनको क्रमशः प्रकाशित किया और उनके मुख से उच्चारित करवाया। वैसे तो इन वेदों को उपस्थित सभी स्त्री-पुरूषों ने सुना पर ब्रह्मा ऋषि जो सबसे अधिक बुद्धिमान व योग्य थे उसने चारों वेदों को कण्ठस्थ कर लिया और वह अन्य लोगों को वेद के मन्त्रों को अर्थ सहित सुनाता रहा जैसा उन चारों ऋषियों ने सुनाया था फिर अन्य लोगों ने भी अपने पुत्र-पौत्रों को तथा शिष्यों को सुनाते रहे। इस प्रकार सुनाना और सुनने का क्रम लाखों-करोड़ों वर्षों तक चलता रहा। जब स्याही, कलम व दवात आदि का आविष्कार हो गया तब इसको चार ग्रन्थों में लिपिबद्ध कर दिया गया। इसीलिए वेदों को श्रुति भी कहते है यानि सुनाना-सुनना की प्रथा से चला हुआ ज्ञान काफी वेद-मन्त्रों में ऋषियों के नाम भी लिखे मिलते हैं, इसी से लोगों को भ्रम हुआ कि वेद, ऋषि-मुनियों के बनाये हुए है। पर वे ऋषि उन मन्त्रों को बनाने वाले नहीं है पर उन मन्त्रों के दृष्टा है जिन्होंने उन मन्त्रों को पूरी तरह समझा था तथा आत्मसात् किया था। वे ऋषि उन मन्त्रों के निर्माता नहीं, बल्कि दृष्टा है।

अब प्रश्न उठता है कि ईश्वर ने वेद क्यों बनाये। वेदों को बनाने की उसको क्या आवश्यकता पड़ी। इसका उत्तर यह है कि ज्ञान दो किस्म का होता है। एक स्वभाविक दूसरा नैमित्तिक। स्वभाविक यानि साधारण ज्ञान वह होता है जो ईश्वर की तरफ से सभी जीवों को प्रदत्त है। इस ज्ञान से जीव अपने नित्य कर्म करता है यानि खाना-पीना, बैठना-उठना, सोना-जागना तथा सन्तान उत्पन्न करना आदि। यह ज्ञान पशु-पक्षियों व कीट-पतंगों में अधिक और मनुष्यों में कम होता है। कारण पशु-पक्षी इसी ज्ञान से अपना पूरा जीवन व्यतीत करते हैं। इस ज्ञान से किये कर्मों का फल ईश्वर नहीं देता कारण यह तो जीव को अपना जीवन चलाने के लिए करने ही पड़ते हैं। दूसरा ज्ञान है नैमित्तिक ज्ञान जो सिखाने से सीखा जाता है। बगैर सिखाये यह ज्ञान नहीं आता। यह ज्ञान मनुष्यों में अधिक और पशु-पक्षियों में रूप होता है कारण: पशु-पक्षियों को इस ज्ञान की जरूरत बहुत कम पड़ती है। जब हम किसी कुत्ते को बुलाकर रोटी देते हैं तो कुत्ता बड़ी प्रसन्नता से आकर रोटी ले जाता है और लेकर शान्ति से बिना भय के रोटी को खाता है। पर हम देखते है कि जब कुत्ता चोरी करके रोटी लेता है तो वह दुबक कर मालिक की निगाह से बचकर जाने की कोशिश करता है। कारण उसको यह पता है कि यह रोटी मैंने मालिक की बिना इच्छा के चुरा कर ली है। यह उसका नैतिक ज्ञान है। परन्तु मनुष्य में नैतिक ज्ञान अधिक होता है। वह सिखाने से ही सीखता है और उसमे स्वभाविक ज्ञान रूप है। इसका उदाहरण यह है कि कुत्ते का बच्चा पैदा होते ही पानी में तैरना सीख जाता है, उसको सिखाने की जरूरत नहीं है। परन्तु मनुष्य के बच्चे को यदि पानी में छोड़ देंगे तो वह डूब जायेगा कारण वह सिखाने से सीखता है। उस बच्चे को तैरना सिखाया जाये तो वह तैर कर निकल जायेगा। इसीलिए सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर ने मनुष्य को सिखाने के लिये वेद-ज्ञान दिया। इस वेद-ज्ञान में ईश्वर ने यह बताया है कि ऐ ! मनुष्य, तुम्हें अपने जीवन को तथा दूसरों के जीवन को सुखी व समृद्धि शाली बनाने के लिए तुम्हे क्या काम करने चाहिये और क्या काम नहीं करने चाहिए।

सब जीवों में मनुष्य योनि सब से उत्तम, श्रेष्ठ, सुन्दर व अन्तिम योनि है। इससे अच्छी ईश्वर ने कोई योनि नहीं बनाई। जीव का अन्तिम लक्ष्य मोक्ष प्राप्त करना है जो मनुष्य योनि में ही सम्भव है। इसलिए मनुष्य योनि मोक्ष पाने का द्वार है। यहाँ एक बात और ध्यान देने योग्य है कि योनियाँ दो किस्म की होती है। एक भोग योनि दूसरी कर्म योनि। भोग योनि में किये कर्मों का फल नहीं मिलता। ये योनियां केवल भोग भोगने के लिए ही मिलती है और कर्म योनि में किये हुए अच्छे व बुरे कर्मों का फल ईश्वर सुख व दु:ख के रूप में देता है। पशु-पक्षी, कीट-पतंग व पेड़-पौधे केवल भोग योनियाँ है। इसमें किये कर्मों का फल नहीं मिलता। मनुष्य योनि भोग व कर्म दोनों योनि है। इनमें मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र और फल पाने में ईश्वर की न्याय व्यवस्था के अधीन है यानि परतन्त्र है। मनुष्य जैसा कर्म करना चाहे वैसा कर सकता है, ईश्वर उसकी आत्मा में संकेत जरूर करता है कि तू अच्छा काम कर बुरा काम मत कर, किन्तु मना नहीं करता। मनुष्य जैसा-जैसा कर्म करता होगा ईश्वर वैसा-वैसा ही फल उसको देता रहेगा। यदि मनुष्य अपने पूरे जीवन में परोपकार की भावना से ही काम करेगा, गीता की भाषा में ऐसे कर्मों को निष्काम कर्म कहा गया है तो वह व्यक्ति मोक्ष पाने का अधिकारी बन जाता है, वैसे तो कर्मों की व्याख्या करना बड़ा कठिन है, पर अनुमान यह है कि पच्चास प्रतिशत से अधिक अच्छे काम करने वाले को साधारण मनुष्य की योनि मिलती है। जितने अच्छे काम अधिक करेगा उतनी ही मनुष्य की योनि अच्छी मिलती जायेगी और पूरे जीवन निष्काम कर्म करेगा तो वह मोक्ष को प्राप्त होगा। ऐसी मोक्ष प्राप्त आत्माओं में भगवान् श्री कृष्ण और भगवान देव दयानन्द को माना जा सकता है। जो मनुष्य अपने जीवन में जितने अधिक बुरे काम करेगा उसको उतनी ही पशु-पक्षी, कीट-पतंग की निम्नयोनि मिलती रहेगी।

यदि ईश्वर सृष्टि के आरम्भ में वेद-ज्ञान न देता तो मनुष्य भी पशुओं की भाँति अज्ञानी ही बना रह जाता। वेदों के अनुसार चलने से ही मनुष्य अपने जीवन को तथा दूसरों के जीवन को सुखी व सफल बनाता हुआ मोक्ष को प्राप्त होता है जो उसका अन्तिम लक्ष्य है जिसके पाने के लिए ईश्वर जीव को उसके कर्मानुसार मनुष्य योनि में भेजता है। अब भी मनुष्य के बच्चे को जन्म होते ही किसी अज्ञात स्थान पर पशुओं के साथ रखा जाये तो वह कुछ नहीं सीख पायेगा और पशुओं की भाँति ही बना रहेगा। इसीलिए ईश्वर ने सृष्टि के आदि में जिस प्रकार मनुष्य की पाँच ज्ञानेन्द्रियां है उनमें आखों के लिए अग्नि, नाक के लिए पृथ्वी, कान के लिए आकाश जिह्वा के लिए पानी और त्वचा के लिए हवा बनाया है उसी प्रकार मनुष्य की बुद्धि व विवेक के लिए वेद-ज्ञान दिया है। जिसके अनुसार चलने से वह अपने अन्तिम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त कर सके।

हम कृतज्ञ है उस महान् आत्मा देव दयानन्द के जिन्होंने करीब पाँच हजार वर्षों से लुप्तवेद-ज्ञान का अपने जीवन में अनेक दु:खों व कष्टों को सहन करते हुए, परिश्रम व त्याग, तपस्या के द्वारा संसार में पुन: प्रकाश किया और पूरे मानव-मात्र को मोक्ष प्राप्ति का राह बताया गया। अब हमारा पावन कर्त्तव्य है कि महर्षि द्वारा स्थापित आर्य समाज जो वेद-प्रचार व परोपकारी कार्यों को करने में जुटी हुई है, उससे जुड़े और वेद-मार्ग पर चल कर अपना व दूसरों का जीवन सुखी व सफल बनावें।

सम्पादकीय......

सत्संगति के चमत्कार

मानव जीवन बार-बार नहीं मिलता। इस जीवन को सफल बनाना ही मनुष्य का परम कर्त्तव्य है। जीवन का एक-एक क्षण बहुत ही मूल्यवान है। इस पल को खोना निज जीवन को खोना है। इस बात से कोई अपरिचित नहीं है कि एक वृक्ष की जड़ों को काट देने से वह वृक्ष शुष्क होकर गिर पड़ता है अर्थात् अपने जीवन से हाथ धो बैठता है। इसी प्रकार मानव की सत्संगति रूपी जड़ प्रारम्भ में ही काट दी जाए तो मनुष्य अपने आनन्दमय जीवन से हाथ धो बैठता है। सत्संगति को हमारे जीवन का एक आवश्यक अंग माना गया है। यह तो हमारे घरेलू जीवन में इस प्रकार है जिस प्रकार दीपक में तेल होता है। तेल न होने के कारण दीपक जल नहीं सकता तथा अंधकार को दूर नहीं कर सकता ठीक इसी प्रकार मनुष्य सत्संगति रूपी दीपक से अंधकार को दूर भगाकर ज्ञान का दीपक जलाकर अपने जीवन को आनन्दमय बनाता है। सत्संगति से युक्त मनुष्य का ऐसे सम्मान होता है जैसे असंख्या तारों के बीच में एक चन्द्रमा का होता है। जिस प्रकार असंख्या फूलों के बीच में गुलाब का फूल शोभा पाता है उसी प्रकार मनुष्य अपने अच्छे आचरण के द्वारा सभी का सम्मान प्राप्त करता है। यह तो सर्वविदित ही है कि मनुष्य अपनी संगति से पहचाना जाता है। यदि किसी पुरूष का उठना बैठना किसी अच्छे पुरूष के साथ है तो सभी लोग उसे भी अच्छा ही समझेंगे और यदि मनुष्य का उठना बैठना किसी बुरे व्यक्ति के साथ है तो वह व्यक्ति भी बुरा ही समझा जाएगा। संत्सगति का प्रभाव मनुष्य पर पडे बिना नहीं रह सकता। मनुष्य सामाजिक प्राणी है और समाज के बिना मनुष्य का निर्वाह करना कठिन ही नहीं अपितु असम्भव है। मनुष्य तो क्या पशु-पक्षी भी अपने समूह से अलग होकर जीवन नहीं गुजार सकते। इसलिए समाज में प्रत्येक मनुष्य को किसी न किसी की संगति करनी पड़ती है। यदि किसी साधु की संगति में बैठेगा तो स्वयं भी सज्जन बन जाएगा और यदि किसी चोर, शराबी तथा डाकू की संगति करेगा तो स्वयं भी वैसा ही बन जाएगा। मनुष्य तो क्या पशु और पक्षियों के ऊपर भी संगति का असर होता है। इसलिए मनुष्य को श्रेष्ठ तथा सद्गुणों से सम्पन्न बनने के लिए ऐसे लोगों की संगति करनी चाहिए जिनका व्यवहार, आचरण पवित्र हो।

विद्यार्थियों पर तो संगति का और भी विशेष प्रभाव पड़ता है। उनकी स्कूलों और विद्यालयों में प्रबल अभिलाषा होती है कि उनके अधिक से अधिक मित्र बनें। मित्र बनाते समय यह देख लेना चाहिए कि उसका व्यवहार कैसा है, आचरण कैसा है। यदि अच्छे मित्रों की संगति सुधार सकती है तो बुरे मित्रों की संगति उन्हें बिगाड़ कर उनका सत्यानाश भी कर सकती है। सत्संगति से मनुष्य कुछ का कुछ बन जाता है। संसार के सभी महापुरूष किसी न किसी श्रेष्ठ पुरूष की संगति से ही प्रसिद्ध हुए। किसी कवि ने कहा है कि सत्संगति कथय किं न करोति पुंसाम अर्थात् सत्संगति मनुष्य के लिए क्या नहीं करती। संगति का प्रभाव तो जड़ वस्तुओं पर भी पड़े बिना नहीं रह सकता। पानी दूध की संगति पाकर स्वयं भी दूध बन जाता है। वर्षा की बूंद सीप में गिर कर मोती बन जाती है। इसलिए जहां तक हो सके मनुष्य को बुरी संगति से बचना चाहिए। हमारे शास्त्रों में सत्संगति की महिमा का बहुत वर्णन किया गया है। आज समाज में फैल रही बुराईयों का कारण सत्संगति का दुष्परिणाम है। आज भ्रष्ट और बुरे लोगों के बीच में रहकर मनुष्य दुष्ट बन गया है। सत्संगति के विषय में कहा गया है कि-वरम् पर्वत दुर्गेषु भ्रमणं वनचरैः सह। न मूर्खजन सम्पर्कः सुरेन्द्र भवनेष्वपि।। अर्थात् पर्वत तथा दुर्गम स्थानों पर जंगली जानवरों के साथ घूमना अच्छा है किन्तु मूर्ख और दुर्जन मनुष्य चाहे चक्रवर्ती ही क्यों न हो वह भी निरर्थक है। सत्संगति के गुणों का वर्णन मनुष्य नहीं कर सकता। सत्संगति के विषय में कहा गया है कि चन्दन तो शीतल होती ही है, चन्द्रमा उससे भी शीतल होता है किन्तु इन दोनों से सज्जन पुरूषों अर्थात् साधु संगति और भी शीतल होती है। सत्संग तो ऐसी अमृतधारा है जिसमें बह कर दानव भी मानव बन जाता है तो मानव का तो कहना ही क्या वह तो दिव्य मूर्त्ति बन जाता है। अंगुलिमाल जैसे भयंकर डाकू जिसे राजा के सिपाही भी नहीं पकड़ सके उसे महात्मा बुद्ध के दिव्य सत्संग से दिव्य मार्गदर्शन मिला और वह उस हिंसा के मार्ग को हमेशा के लिए त्याग कर अहिंसा का पुजारी बन गया। अमीचन्द जैसा भ्रष्ट और शराबी व्यक्ति महर्षि दयानन्द की संगति पाकर भक्त अमीचन्द के रूप में प्रसिद्ध हो गया। सत्संगति से मनुष्य बुरे गुणों का त्याग कर सद्गुणों का ग्राहक बन जाता है। मनुष्य सत्संगति के द्वारा ही देवत्व की ओर जाता है। आज समाज में जो बुराईयां फैल रही हैं उन सबका कारण बुरी संगति है। बुरी संगति में पडकर मनुष्य नीच से नीच कर्म करने से भी नहीं डरता। नीति शास्त्र में सत्संगति की महिमा का वर्णन करते हुए कहा गया है कि-

वरमेको गुणी पुत्रो न च मूर्खशतान्यपि।
एकः चन्द्रस्तमो हन्ति न च तारागणो अपि।।

नीतिकार कहता है कि गुणी पुत्र एक ही श्रेष्ठ है अर्थात् उस एक के द्वारा ही कुल का नाम रोशन होता है। मूर्ख पुत्र सौ भी अच्छे नहीं हैं क्योंकि उनसे कुल की बदनामी होती है। जिस प्रकार आकाश में एक चन्द्रमा के उदय हो जाने पर अन्धेरा दूर हो जाता है परन्तु तारों के समूह भी अन्धेरे को दूर नहीं कर सकते।

सत्संगति के द्वारा मनुष्य अपने दुर्गुणों को त्याग कर सद्गुणों को प्राप्त करता है जिससे उन्नति करता हुआ दिव्यमूर्ति बन जाता है। आज सामाजिक बुराईयों को दूर करने के लिए तथा नई पीढ़ी को बचाने के लिए श्रेष्ठ पुरूषों का संग करना आवश्यक है। जिस प्रकार फूलों का संग पाकर कीड़ा भी सज्जनों के सिर तक पहुंच जाता है उसी प्रकार बुरे से बुरा मनुष्य भी अच्छे लोगों की संगति से उनके मार्गदर्शन से उन्नति के शिखर तक पहुंच जाता है। हमारे शास्त्रों में सभी बुराईयों की जड़ बुरी संगति को बताया गया है। शास्त्रों में कहा गया है कि अगर हम सुखी रहना चाहते हैं अपने राष्ट्र को समृद्ध तथा खुशहाल देखना चाहते हैं तो हमें अपने आपको तथा अपने बच्चों को बुरी संगति से बचाना होगा। आज का विद्यार्थी वर्ग अच्छी संगति के अभाव तथा मार्गदर्शन के बिना अपने रास्ते तथा उद्देश्य से भटक गए हैं। आज शिक्षा का उद्देश्य मात्र आजीविका प्राप्त करना रह गया है। इसलिए माता पिता तथा अध्यापकों को चाहिए कि वे बच्चों के अन्दर अच्छे गुण उत्पन्न करें। नैतिक शिक्षा के द्वारा उन्हें संस्कारवान व सभ्य बनाएं ताकि वे समाज में उत्पन्न बुराईयों को दूर कर सके।

-प्रेम भारद्वाज संपादक एवं सभा महामन्त्री

मृत्यु के भय से मुक्ति

-ले० श्री मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून 196/2 चुक्खूवाला, देहरादून

हम अपने दैनन्दिन जीवन में मृत्यु के बारे में देखते, सुनते व पढ़ते रहते हैं। कुछ लोग बीमार होकर मरते है, कोई दुर्घटना का शिकार हो जाता है और कुछ यदा-कदा आत्महत्या कर अपने जीवन को समाप्त कर लेते हैं। जीवन व मृत्यु सापेक्ष शब्द हैं। जिस प्रकार हर सुबह की शाम होती है और हर सायं की प्रातः होती है उसी प्रकार हर जीवन की समाप्ति मृत्यु पर और हर मृत्यु नये जीवन की शुरूआत होती है जिसका परिणाम पुनः नया जीवन होता है। जब व्यक्ति थक जाता है तो आराम करता है और उससे उसे नया जोश व उत्साह मिलता है। इसी प्रकार जीवन में थकने व वृद्ध होने पर मृत्यु आती है। मृत्यु के बाद जीवात्मा कुछ आराम करता है और फिर नये उत्साह एवं जोश के साथ उसका नया जीवन आरम्भ होता है जो पूर्वजन्म के कर्मानुसार मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट व पतंग आदि किसी भी योनि में शैशव से आरम्भ होकर वृद्धावस्था एवं अन्त में पुनः मृत्यु पर विराम लेता है।

हम यह भी देखते हैं कि जब किसी मनुष्य की मृत्यु होती है तो वह डरता है, कांपता है और आत्मा व प्राणों के निकलने से पहले चिन्तित होता है। यही नहीं यदि किसी युवक व युवती के सामने उसकी मृत्यु की चर्चा करें तो वह सुनना पसन्द नहीं करते और डर कर उस विषय को बदल देते हैं। मनुष्य ही नहीं अपितु पशु-पक्षी भी मृत्यु से डरते हैं और मृत्यु से पूर्व विलाप करते हैं। जिन भेड़ों व बकरियों को मृत्यु के लिए ले लाया जाता है या उन्हें मारा जाता है, वह मृत्यु से पूर्व बहुत ही दुःखी एवं अपनी जान बख्श देने की याचना करती हुई प्रतीत होती हैं। मुर्गी व मुर्गे, जो सामिश भोजियों का भोजन है, यह भी मृत्यु से पूर्व दुःखी प्रतीत होते हैं। योगदर्शन में मृत्यु के दुःख को अभिनिवेश क्लेश माना जाता है। यह मृत्यु साधु, संन्यासी, ज्ञानी, ध्यानी व आम आदमी सभी को सताती है। इस अभिनिवेश क्लेश से बचने का क्या कोई उपाय है अथवा नहीं ? आईये, विचार करते हैं।

मृत्यु से भय क्यों लगता है, पहले इस विषय पर विचार कर लेते हैं। मृत्यु से डर लगने का एक कारण हमारे चित्त पर मृत्यु का पुराना संस्कार होना है। यह संस्कार कहां से आया, जब इस पर विचार करते हैं तो लगता है कि हम पहले भी मर चुके हैं। जिस व्यक्ति ने मीठा कभी न खाया हो वह दूसरे के बताने से उसका स्वाद नहीं जान सकता। जिसने पहले जो कार्य किया हुआ है, उसी व्यक्ति को उसका अनुभव रहता है और जो कार्य कभी न किया हो उसका अनुभव कम से कम एक बार करने के बाद ही हुआ करता है। मृत्यु से डर भी एक पूर्व का अनुभव है तभी तो मरने से पहले ही, दूसरों की मृत्यु को देख कर, सुन कर या पढ़कर, हमें अपनी पूर्व की मृत्यु की याद आती है और उस मृत्यु के अनुभूत प्रसुप्त स्मृतियों के संस्कारों से हमें डर लगता है। इसके अतिरिक्त हम अपने परिवार, समाज व इधर उधर मृतकों, शवों व उनके दाह संस्कार आदि देखते रहते हैं। इनको देख कर उनके स्वजनों से पृथक होते देख तथा जीवितों को स्वाभाविक रूप से रोते बिलखते भी देखते हैं। रोने का कारण उनका मृतक के प्रति राग, प्रेम, स्वार्थ व आसक्ति आदि होती हैं। ऐसा भी देखा जाता है कि जिससे कोई द्वेष करता है, उसकी यदि मृत्यु हो जाये तो द्वेषी को कोई दुःख नहीं होता। अतः दुःख का कारण मृतक व्यक्ति के प्रति राग का होना है। समाचार पत्र में किसी अज्ञात व्यक्ति की मृत्यु या दुर्घटना का समाचार पढ़कर कोई विशेष दुख नहीं होता क्योंकि यहां मृतक के प्रति राग नहीं है जबकि अपने प्रियजनों की मृत्यु पर दुःख होता है जिसका कारण स्पष्टतः राग है। मृतक को मृत्यु से पूर्व ऐसा ही दुःख होता है क्योंकि उसका अपने प्रियजनों से राग होता है और वह हमेशा के लिए उनसे बिछुड़ रहा होता है। परन्तु उसकी विवशता है और मृत्यु से हो रही पृथकता को रोकने का उसके पास कोई उपाय नहीं होता। हम यह भी जानते हैं कि कोई भी दुःख धीरे-धीरे कम होता जाता है और फिर सामान्य अवस्था आ जाती है। ऐसा ही मृतक के साथ भी होता है। वह भी आरम्भ में अधिक दुःखी होता है और धीरे-धीरे सामान्य हो जाता है। मृत्यु आने तक कई लोग प्रायः सामान्य स्थिति को प्राप्त हो जाते हैं।

मृत्यु क्या है ? इस पर विचार करते हैं तो पाते हैं कि पंच भौतिक शरीर से एक अभौतिक चेतन तत्व जो जीवात्मा कहलाता है, जो कि वस्तुतः 'मैं' अर्थात् जीवात्मा है, शरीर से पृथक होता है अर्थात् निकल जाता है। हम अर्थात् जीवात्मा का स्वरूप कैसा है। आईये इसे भी जान लेते हैं। जीवात्मा एक चेतन तत्व, अल्पज्ञ, ज्ञान व गति गुण वाला, एकदेशी, अल्प शक्तिमान, जन्म-मृत्यु धर्मा, पाप-पुण्य कर्मों को करने वाला, सुख व दुःखों को भोगने वाला, अजर, अमर, नित्य, अत्यन्त सूक्ष्म, ईश्वर में व्याप्य, आंखों से दिखाई न देने वाला आदि गुणों वाला है। इसका जन्म क्यों हुआ था और क्यों इसे मरना पड़ा ? इसका जन्म अपने पूर्व जन्मों में किए हुए कर्मों के फलों को भोगने के लिए हुआ था। मृत्यु भौतिक शरीर का धर्म है। इसको तो अन्ततः मरना ही होता है। चाहे किसी दुर्घटना से, रोग या फिर वृद्धावस्था आदि के कारण शरीर के जर्जरित होने पर मृत्यु हो। अब तक हमने स्वयं को, जन्म व मृत्यु को व मृत्यु से होने वाले भय को कुछ जाना है। अब आगे मृत्यु से होने वाले भय से मुक्त होने के उपायों पर विचार करते हैं।

मृत्यु के भय से मुक्त होने के लिए पहला उपाय तो यह है कि मृत्यु के वास्तविक स्वरूप को जाना जाये। मृत्यु क्या केवल शरीर की होती है या आत्मा की भी होती है। हमारे पास हमारे ऋषि-महर्षियों का अनुभव व उनका प्रत्यक्ष ज्ञान उपलब्ध है जो कि शब्द प्रमाण है और बिना किसी शंका, शक या सन्देह के स्वीकार करने योग्य है। शब्द प्रमाण उसी प्रकार पूर्ण सत्य होता है कि जैसे आज उपलब्ध कम्प्यूटर के ज्ञान को पुस्तकों से पढ़कर हम नया कम्प्यूटर बना सकते हैं या बने हुए कम्प्यूटर का प्रयोग कर उसका लाभ जैसा कि पुस्तकों व साहित्य में वर्णित है, ले सकते हैं। यह शब्द प्रमाण, जो वेद एवं ऋषियों के बनाये शास्त्रों में उपलब्ध हैं, बताते हैं कि शरीर में एक चेतन तत्व जीवात्मा होता है जो कि अति सूक्ष्म होता है और शरीर से पृथक तत्व है। अपनी माता के शरीर से एक शिशु के रूप में जन्म के साथ यह संसार में अपने पूर्व जन्मों के कर्मों का फल भोगने के लिए आता है और आयु पूरी होने पर मृत्यु को प्राप्त होकर, यह जीवात्मा, शरीर से निकल कर वायु, आकाश आदि में चला जाता है। फिर ईश्वर की कृपा व प्रेरणा से अपने कर्मानुसार पुनः नया जन्म प्राप्त करता है। पिता व माता के शरीर में आने से पूर्व जीवात्मा का जो स्वरूप होता है वह जन्म लेने के बाद पुनः मृत्यु होने पर वैसा ही होता है। जब शरीरधारी जीवात्मा गहन चिन्तन करता है तो उसे विदित हो जाता है कि मृत्यु तो शरीर की होनी ही है परन्तु मृत्यु के पश्चात भी उसका अस्तित्व बना रहता है। उसके पश्चात उस मृतक जीवात्मा को उसके पूर्व जन्म के कर्मानुसार नया जन्म मिलना अवश्यंभावी है, तो इस सत्य को, रहस्य को व जीवन की यथार्थता को जानकर मृत्यु की प्रक्रिया से जो भय व दुःख होता है, वह इस यथार्थ ज्ञान से कम होगा। 28 जनवरी 2012 को मृत्यु से तीन चार दिन पूर्व हमारे मित्र श्री चन्द्रदत्त शर्मा ने फोन पर हमें कहा था कि मनमोहनजी ! मृत्यु से क्या डरना उसको तो आना है। यह अनुभव की बात है और उसे स्वयं के विचार, चिन्तन व मनन से ही जाना व समझा जा सकता है। यहां हमें दो बातें ज्ञात हुई, पहली कि आत्मा अमर व अविनाशी है और दूसरी की हमारा नया जन्म अवश्य होगा जो कि अनुमान व शब्द प्रमाण से सिद्ध है। हमने यह भी जाना कि मृत्यु आत्मा की नहीं पंच-भौतिक शरीर की हो रही है जो कि वस्तुतः हम हैं ही नहीं। तो फिर मृत्यु का भय क्यों वा कैसा, अब हमारा मृत्यु का भय कम हो गया। **(क्रमशः)**

वेद विद्याओं के अनुसंधान की आवश्यकता

-ले० श्री पं.वीरसेन वेदाश्रमी वेद सदन-इंदौर

वेदों के प्रति हमारी उपेक्षा से आज हम अपने लक्ष्य से बहुत दूर हो गये हैं और अपनी प्रतिज्ञा को हम भूल बैठे हैं। वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक हैं। यह हमारे वचन में कथन मात्र रह गया है। परन्तु हमारे विश्वास और व्यवहार इससे विपरीत दिशा में बड़ी तेजी से बढ़ते जा रहे हैं। हमारे चारों ओर अवैदिक विद्याओं का, अवैदिक शिक्षा दीक्षा का और सभ्यता तथा संस्कृति का दृढ़तम बंधन बढ़ता जा रहा है और हमें कसता जा रहा है। हमारी वैदिक सभ्यता, शिक्षा दीक्षा एवं विद्याओं के पुनरूत्थान तथा पुनरूज्जीवन का प्रश्न हमारे लिये जीवन मरण का प्रश्न है। परन्तु हम इसकी ओर से पूर्ण उदासीन हैं और हमारे प्रयत्न तो हमारी संतति को वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। इस वाक्य को उपहास्यास्पद कोटि में मान्य किये जाने के लिये अग्रसर कर रहे हैं।

हमारा सम्पूर्ण व्यवहार एवं दैनिक जीवन जिन जिन विद्याओं एवं जिस विज्ञान के आधार पर पग पग चल रहा है उन विद्या तथा विज्ञानों के आविष्कर्त्ता अनात्मवादी तथा अनीश्वरवादी थे। उनको वेद तथा ईश्वर पर विश्वास नहीं होने से उसका प्रभाव उन विद्या के अध्येताओं तथा उस विज्ञान के द्वारा उत्पन्न सुख सुविधाओं के उपभोक्ताओं पर भी अत्यन्त प्रभावशाली रूप में पडता है। इस प्रकार वर्तमान शिक्षा दीक्षा से और वर्तमान विज्ञान से तथा इससे उत्पन्न सभ्यता तथा संस्कृति के ईश्वर, वेद, अध्यात्म तथा धर्म विरोधी अभेद्य दुर्ग दृढ़तर होता जाता है।

हमने संसार के सामने अपनी प्रतिज्ञा तो घोषित कर दी कि वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है परन्तु प्रतिज्ञासिद्धि के लिये अभी तक यह भी नहीं बना सके कि वे सत्य विद्याएं कौन सी है तथा कितनी हैं? जब हम यह भी नहीं बता सके तो उन विद्याओं को पढ़ाना और उसके अनुसार व्यवहार का प्रचलन कैसे संसार में हो सकेगा? जब हमारी प्रतिज्ञा को ही हम सिद्ध नहीं कर पाते और न उसकी सिद्धि के लिये ही प्रयत्न करते हैं तो प्रतिपक्षी संसार का जन समुदाय हमारी बात क्यों माने? वह तो हमारी बातों का खंडन ही करेगा और कहेगा कि वेद विद्याओं की पुस्तक नहीं हैं। उसमें तो आर्यों का इतिहास है। वह तो आर्यों द्वारा रचित सुन्दर काव्य मात्र है। उसमें तो आर्यों के सामाजिक तथा दार्शनिक जीवन का तथा विचारों का चित्रण है। उसमें तो घोड़ा, गाय आदि पशु मारना लिखा है। उसमें जुआ खेलना लिखा है। मद्य पीना लिखा है। भाई बहिन के विवाह प्रस्तावादि सदृश बातें भी हैं। वैज्ञानिक तथा शिक्षित जगत इन विचारों से वेद को देख रहा है।

यदि हम इन बातों को सुन कर अधीर हो जाते हैं तो किसी न किसी प्रकार का उत्तर अपने ही क्षेत्र में, अपने ही पक्ष के व्यक्तियों में उसके खंडन के लिये दे देते हैं। हमारा उत्तर प्रतिपक्षी के पास तो पहुंच ही नहीं पाता और न भूमंडल के शिक्षित समाज और वैज्ञानिक जगत के सम्मुख ही हमारी विचारधारा ही पहुंच पाती है। चाहिये तो यह कि स्वपक्ष स्थापना का प्रयत्न तो सम्पूर्ण शक्ति के साथ सदा हम करते रहे। स्वपक्ष स्थापना तभी पूर्ण होगी जब कि हमारी शक्ति वेदों से सब विद्याओं के अन्वेषण और उसको व्यवहारोपयोगी बनाने में लग जावे और जनसाधारण में उसका इसी प्रकार प्रचलन हो जावे जैसे आज पाश्चात्य विद्या, विज्ञान तथा विचारधारा का भूमंडल पर साम्राज्य है। अन्यथा प्रतिज्ञा असिद्धि का यही परिणाम हो रहा है कि आज हम वेद का नाम अवश्य लेते हैं, परन्तु व्यवहार रूप में उसके प्रति हम हमारी संस्थाएं, सभाएं और हमारी सन्तानें पूर्ण उदासीन हैं। यदाकदा वेदानुसंधान कार्य के प्रति हम में उत्साह और उमंग के भाव आ जाते हैं परन्तु योजना शून्य उत्साह होने से सफलता कोसों ही सदा दूर बनी रहती है।

यदि अनुसंधान को योजना कोई वैयाकरण बनाता है तो उस अपने द्वारा भाष्य रचना का कार्य ही उत्तम प्रतीत होता है या महर्षि के वेदभाष्य पर व्याकरण प्रक्रिया में अपना पाण्डित्य प्रदर्शन करने को ही अनुसंधान की सफलता की कसौटी मानता है। यदि कोई एम.ए. डी लिट् व्यक्ति अनुसंधान की योजना बनाता है तो उसके अनुसार अनुक्रमणिका और लिपिक कार्य ही अनुसंधान की श्रेणी में बड़ा महत्वपूर्ण कार्य समझ लिया जाता है। यह बातें प्रकट करती हैं कि हमारे मस्तिष्क में यथार्थ रूप में अनुसंधान की कोई रूपरेखा है ही नहीं। पाश्चात्य विद्वानों ने वेद को जिस दृष्टि से देखा उसी दृष्टि से उन्होंने अनुसंधान भी प्रारम्भ किया। वे अपने लक्ष्य के अनुसार कार्य कर रहे हैं परन्तु हम भी उनका अनुकरण करने में अपना गौरव अनुभव करें तो हम अपने अनुसंधान कार्यों से विदेशियों के वेद सम्बन्धी मतों की ही पुष्टि करने में सहायक सिद्ध हो सकेंगे। अत: आवश्यकता इस बात की है कि हम वेद सम्बन्धी अनुसंधान अपने लक्ष्य के अनुसार ही करें।

हमारा लक्ष्य है वेदों में जो सब सत्य विद्याएं हैं उनका मानव जात में प्रचलन हो और उससे प्राणिमात्र को सुख की प्राप्ति हो। अत: इसकी पूर्ति के लिये सबसे प्रथम कार्य यह करना होगा कि हम एक सूची तैयार करें जिससे यह ज्ञात हो सके कि वेद में कौन कौन सी विद्याएं हैं? यह कार्य चारों वेदों के सम्यक परायण से हो सकता है। इस कार्य में कम से कम 3 से 5 वर्ष का समय लगेगा और 1-2 विद्वान इस सूची को तैयार कर सकेंगे। इसके साथ ही आज भूमंडल पर कितनी विद्याएं प्रचलित हैं इसकी सूची 1-2 विद्वान तैयार कर सकते हैं। इस प्रकार वैदिक विद्याओं की तथा अर्वाचीन विद्याओं की सूची तैयार करने का कार्य चार विद्वानों द्वारा पांच वर्षों में पूर्ण हो सकता है।

इस कार्य के पश्चात एक वर्ष में दोनों प्रकार की विद्याओं का अर्थात पाश्चात्य देशों में प्रचलित विद्याओं और वेद की विद्याओं का समन्वय एवं भेद का कार्य संक्षिप्त रूप से यह हो सकता है कि वर्तमान में प्रचलित विद्याएं वेद की किस किस विद्या के अन्तर्गत समझी जा सकती है और ऐसी कौन सी विद्याएं हैं जिन पर पाश्चात्य जगत ने अभी तक कुछ भी कार्य नहीं किया है। जिन विद्याओं के बारे में अभी तक कुछ भी कार्य एवं अनुसंधान नहीं हुआ है उस पर यदि हम या हमारे विद्वान अनुसंधान कर सकते हैं तो उसके लिये हमें अपना अनुसंधान मार्ग निकाल कर कार्य प्रारम्भ करना चाहिये अथवा यदि उसके अनुसंधान के लिए पाश्चात्य के विद्वानों एवं वैज्ञानिकों को अनुसंधान की प्रेरणा दे सकते हैं तो देनी चाहिये। इस प्रकार सहयोगात्मक प्रणाली से भी कार्य हो सकता है और जिन विद्याओं के विषय में हम स्वतंत्र रूप से कार्य कर सकते हैं उनके बारे में स्वतंत्र रूप से अनुसंधान कार्य प्रारम्भ कर देना चाहिये।

उदाहरणार्थ यज्ञ दुभवति पर्जन्य यह हमारे वेद शास्त्रों की एक सर्वसम्मत सुनिश्चित घोषणा है। इसको सर्वधारणा के लिये इतना सुपरीक्षित एवं अनुभव सिद्ध प्रमाणित कर दिया जो कि जब चाहे सभी इसको प्रयोग करके जनता लाभ उठा सके।

वेद ने निकामे निकामे न: पर्जन्यो वर्षतु हमारे मुख से प्रार्थना के रूप में वाक्य कहलवाया है। अत: निकामे निकामे जब जब कामना करें जब जब चाहें तब तब वर्षा हो जावे ऐसी स्थिति प्राप्त करनी होगी। प्रार्थना की सफलता इसी में है। संकल्प या इच्छा के अनुसार वर्षा हो जावे ऐसी स्थिति प्राप्त करने के लिये मानसून को बनाना उसको इच्छानुसार स्थान पर केन्द्रित करना उसको घनीभूत करके मेघरूप में लाना पुन: उसको न्यूनाधिक इच्छानुसार बरसाना और इस कार्य में यदि वायु की प्रतिकूलता हो जावे तो उसे भी नियंत्रित करना, वायु के घनत्व और दबाव में इच्छानुकूल परिवर्तन करना इत्यादि क्रियाओं के जाने बिना यह कार्य संभव नहीं। किसी भी मंत्र को पढ़ कर किसी भी द्रव्य की आहूति देने या दिलाने मात्र से यह कार्य सिद्ध नहीं होगा। इसके लिये मंत्र और आहुति दोनों को ही विद्या एवं विज्ञान की युक्ति से प्रयुक्त करके व्यवहारोपयोगी बनाना होगा।

(शेष पृष्ठ 6 पर)

जब इस वैदिक के व्यावहारिक

पृष्ठ 5 का शेष- वेद विद्याओं.....

रूप द्वारा जनता का कल्याण हो सकेगा तभी वेद के प्रति भ्रान्त धारणाओं का निराकरण जन मानस के हृदयों से स्वत: ही हो जावेगा।

निकामे निकामे न: पर्जन्योवर्षतु जब जब चाहें तब तब बादल वर्षा करें, इससे विपरीत स्थिति भी प्राप्त करनी होगी। अर्थात जब जब वर्षा न चाहे तब तब वर्षा न हो या रूक जावे। अर्थात वृष्टि कराने पर और न कराने पर या वर्षा रोकने पर भी पूर्ण नियंत्रण अपनी इच्छानुसार होना चाहिये। अतिवृष्टि और अनावृष्टि पर अपने नियंत्रण से कितना उपयोगी कार्य हो सकता है? हम पृथ्वी को अन्न और फलों से समृद्ध कर सकते हैं। प्राणिमात्र के प्राणों की रक्षा एवं जीवन में इस प्रक्रिया द्वारा हम महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान कर सकेंगे।

वेदों में वृष्टिविज्ञान के लिये बहुत कुछ महत्वपूर्ण बातें प्राप्त होती हैं। अत: इस विद्या का अनुसंधान करें तो हम वैदिक विज्ञान से प्राणिमात्र का लाभ कर सकते हैं और इससे वेदों का महत्व विश्व में स्थापित करके वेदों के पठन पाठन के लिये समस्त देशों को प्रेरणा दे सकते हैं। जब हम वेदों को इस प्रकार विद्या की पुस्तक प्रमाणित कर देंगे तो वेद के सम्बन्ध में पाश्चात्य विद्वानों द्वारा फैलाए गये भ्रान्त एवं मिथ्या वायदों का स्वत: ही निराकरण हो जायेगा और वेद के अध्ययन की ओर सब की प्रवृत्ति भी बढ़ेगी। यह कार्य पांच वर्ष में बहुत कुछ सफलता प्राप्त कर सकता है। व्यर्थ के आन्दोलनों में अपनी शक्ति और धन को न लगा कर यदि आर्यजन आर्य समाजें, आर्य संस्थाएं और प्रतिनिधि सभाएं इस प्रकार के अनुसंधान कार्यों में अपने धन, शक्ति और जीवन को लगावें तो वास्तव में अपने लक्ष्य प्राप्ति में सफल हो सकेंगे।

इसी प्रकार वेद में लोक लोकान्तरों में जाने के बारे में तन्यो पतेम सुकृतामुलोक यत्र ऋषयोजम्मु: प्रथमजा पुराणा: के द्वारा किन्हीं प्रकार के विमानों और उनके द्वारा लोक लोकान्तर जाने का संकेत मिलता है। यह कार्य संभव है तभी मंत्र की रचना भी ऐसी है। लोक लोकान्तर जाने की विद्या प्राचीन काल में प्रचलित थी। नारद ऋषि का लोक लोकान्तर जाना अत्यन्त प्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त मंत्र, तप, औषधि एवं समाधि द्वारा लोकान्तर गमन की सिद्धि शास्त्रों ने बताई है। यदि इस बारे में अनुसंधान आरम्भ किया जावे तो यह निरर्थक सिद्ध नहीं होगा। संभव है अभी हम पांच वर्ष में यह स्थिति प्राप्त न कर सकें तथापि इस अन्वेषण से मध्यवर्ती बहुत से रहस्य प्रकट हो सकेंगे जो अन्य विद्याओं के अन्वेषण में सहयोग प्रदान कर सकेंगे।

आज से 10 वर्ष पूर्व मैंने वेद की छन्द शक्ति के आधार पर ऐसे यंत्रों के बारे में विचार किया था जिनके आधार पर बिना पेट्रोल आदि के इंजन के ही मंत्र का चालन हो सके। वेद में छन्द शब्द केवल पिंगल के छन्द से ही सम्बन्धित नहीं हैं अपितु बहुत व्यापक अर्थ में है। मैंने वेद के माच्छन्द: के आधार पर यंत्र में गति एवं शक्ति का प्रादुर्भाव बताया था। यदि इस कार्य में परीक्षण किये जावें तो तीन साल में लोकोपयोगी परिणाम दृष्टिगोचर हो सकते हैं।

इसी प्रकार पशु पक्षियों की बोलियों के सम्बन्ध में अनेक प्रकार के अर्थ ग्रहण करने के संकेत वेद में उपलब्ध हैं। योग दर्शन में इस विद्या के विकास का प्रकार भी बताया गया है। पांच वर्ष यदि इस कार्य में लगाये जावें तो बहुत बड़ी सफलता प्राप्त हो सकेगी। अभी वर्तमान अन्वेषकों ने इस कार्य में प्रगति नहीं की है। यदि हम इस कार्य को हाथ में लेकर कार्य में अग्रसर हो जावें तो वैदिक विज्ञान की प्रतिष्ठा को स्थापित करने में यह भी बहुत सहायक सिद्ध होगा।

इसी प्रकार वसो: पवित्रमसि शताधारं वसो: पवित्रमसिसहस्रधारम् के आधार पर वेद ने हमें विश्व का सूक्ष्म अवगाहन करने की प्रेरणा दी है कि यज्ञ सैंकड़ों और सहस्रों प्रकार से विश्व को धारण करने वाला है। यज्ञ के द्वारा विश्व का धारण पोषण और उसके तत्वों को शक्ति एवं सामर्थ्य किस किस प्रकार से प्राप्त होती है और उनके सैंकडों और सहस्रो प्रकार या विधियां क्या है तथा उनसे किस किस प्रकार विश्व के कौन कौन से पदार्थों का धारण और पोषण हो रहा है। यही तो विश्व का महान विज्ञान है जो वेद के देवत एवं छान्दस विज्ञानों से विश्व में व्याप्त है और जिसके माध्यम से विश्व का कार्य सुव्यवस्थित रूप से चल रहा है। इसी विज्ञान के आधार पर प्रभु के यज्ञ द्वारा भी जोकि यज्ञ सदा सृष्टि में चलता रहता है। विश्व का धारण, पोषण एवं संचालन हो रहा है और विश्व का जीवन बना रहता है। इसी विज्ञान को प्राप्त कर हम भी अपने यज्ञों द्वारा विश्व के अंदर अपने अनुकूल वृद्धि एवं क्षय करके संसार को लाभान्वित कर सकते हैं।

उदाहरणार्थ यदि शीत की लहर वायुमंडल में व्याप्त हो जाने से पृथिवीस्थ प्राणियों को कष्ट हो रहा हो तो यज्ञ के माध्यम से उन तत्वों का प्रसारण किया जाये जिससे अपने नियत क्षेत्र में ही शीत की हानि से रक्षा हो सके या उस क्षेत्र के आग्नेय तत्वों को सक्रिय करके वातावरण को समशीतोष्ण बनाया जा सके। इसी प्रकार ग्रीष्म की प्रचंडता से यदि प्राणियों, वृक्ष वनस्पतियों को प्रतिकूलता हो जाये तो उसके निवारणार्थ वातावरण में शीत तलों को सक्रिय बनाया जा सके। इसी प्रकार वायु की गति बदलने का कार्य भी संभव है। यदि वातावरण पर इच्छित नियंत्रण के प्रयत्न एवं परीक्षण किये जावें तो बहुत कुछ सफलता यज्ञ के विशाल विज्ञान के द्वारा प्राप्त हो सकती है। इस कार्य में सहयोग प्राप्त करने के लिये वेद एक अक्षय कोष के तुल्य प्रमाणित होगा।

इतना ही नहीं वेद तो विद्या और विज्ञान के क्षेत्र में हमें बहुत अग्रसर करता है। यज्ञ के विज्ञान से अंतरिक्ष और द्युलोक में नक्षत्र एवं ग्रहों पर भी अनुकूल तथा प्रतिकूल प्रभाव डाला जा सकता है। प्रत्येक वस्तु के निर्माण में विश्व की समस्त शक्तियों का भाग रहता है। परन्तु उनके गुण, कर्म, विपाक तथा प्रभाव तत्वों के पृथक पृथक न्यूनाधिक मात्राओं से संगठित होने से पृथक पृथक होते हैं। जब वस्तु निर्मित होती है तो वह अपने अंदर उन सब तत्वों तथा शक्तियों से युक्त होती है और जब यज्ञ में विकेन्द्रीकरण किया जाता है तो उसके तत्व और शक्तियां अपने मूल्य तत्वों में स्थापित हो जाती हैं। यदि उनका विकेन्द्रीकरण करते समय उनमें अन्य द्रव्यों के संस्कार उत्पन्न करने के लिये इच्छित द्रव्य भी डालें तो उन द्रव्यों के संस्कारों के साथ भी उस द्रव्य के तत्व और शक्तियां अपने मूल्य द्रव्य में पहुंच कर उसमें अनुकूल प्रभाव उत्पन्न करने लगती हैं। इसी सिद्धान्त के आधार पर भारत के ऋषियों ने चन्द्रमा मंडल के क्षय का निवारण भी पूर्वकाल में किया था। यदि चन्द्रमा में सोम की न्यूनता हो जावे तो पृथिवीस्थ वृक्ष वनस्पति की बहुत ही हानि हो जावे। यदि यज्ञ द्वारा हम चन्द्रमा में सोम की उत्पत्ति के प्रकार को समझ कर उसका प्रयत्न करें तो उसका परिणाम पृथिवी के लिये हितकर होगा।

इसी प्रकार पृथिवी में यदि उत्पत्ति शक्ति की क्षीणता की न्यूनता हो जावे तो यह पृथिवी की उत्पादन शक्ति का क्षय है। इस क्षय का निवारण भी इसी आधार पर हो सकता है। इसी आधार पर पृथिवी के अंदर सुवर्णादि की वृद्धि का कार्य भी यज्ञ के विज्ञान से संभव है। इसी प्रकार से अनेक कार्य हैं जो वेद के यज्ञ के विभाग से सम्बन्धित हैं और अनुसंधान तथा परीक्षणों की बहुत आवश्यकता रखते हैं। उपरोक्त कार्य श्रद्धा के ही विषय नहीं हैं अपितु तर्कसंगत हैं। अब हम इन पर विचार करते हैं तो इन की सत्यता 2-2-4के समान प्रतीत होती है।

वेद में सुषुम्न: सूर्य रश्मिश्चन्द्रमागन्धर्व: कह कर बताया गया है कि सूर्य की एक रश्मि सुषुम्ना है जिसको चन्द्रमा धारण करता है और वह प्राणियों के लिये सुखप्रद है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने इस मंत्र का भाष्य करते हुये लिखा कि मनुष्यों को चाहिये कि वे सूर्य एवं चन्द्र की रश्मियों के विविध उपयोग को जानें। इस आधार पर यदि हम सुषुम्ना रश्मि को जान कर एक कृत्रिम उपग्रह चन्द्र तत्वों का बना कर भूमंडल के चारों और घूमने वाला इस प्रकार से चलावें कि उस पर सुषुम्ना रश्मि पडे और उसका लाभ चन्द्रमा के प्रकाश के प्रभाव में नियमित रूप से हो सके तो रात्रि में सदा प्रकाश ही बना रह सकता है। अनेक प्रयत्नों एवं परीक्षणों से यह भी संभव है। इस प्रकार वेद से हमें उच्चतर विज्ञान की भी महान प्रेरणा मिलती है। आज जब हम इस प्रकार सभा के विज्ञानों से विश्व को लाभान्वित नहीं कर सकते और वेद के विज्ञान को व्यवहारोपयोगी नहीं बना सकते। तब तक हमारे सब प्रयत्न वेद के प्रचार के निष्फल ही होते रहेंगे। अत: वेद के अनुसंधान के लिये हमें अपने विचारों में अनुसंधान के लिये मौलिक परिवर्तन करना होगा तभी सफलता प्राप्त हो सकेगी।

-आर्योदय से साभार

आर्य समाज आर्य नगर जालन्धर का 36वां वार्षिक महोत्सव

आर्य समाज वेद मंदिर आर्य नगर जालन्धर का 36 वां वार्षिक महोत्सव 19 मई 2014 से 25 मई 2014 तक बड़ी धूमधाम से मनाया जा रहा है। इस अवसर पर आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान् आचार्य महावीर मुमुक्षु जी के प्रवचन तथा आर्य प्रतिनिधि सभा के भजनोपदेशक श्री जगत वर्मा जी के मधुर भजन होंगे। मुख्य समारोह 25 मई 2014 को होगा। कार्यक्रम का शुभारम्भ 8:00 से 10:00 बजे तक विश्व शांति महायज्ञ के साथ होगा। यज्ञ के पश्चात ध्वजारोहण श्री अविनाश घई एम.डी. यूनीक ग्रुप के करकमलों द्वारा किया जाएगा। 10:30 से 2:00 बजे तक आर्य महासम्मेलन होगा जिसकी अध्यक्षता श्री सरदारी लाल जी आर्य रत्न करेंगे। इस कार्यक्रम में मुख्य अतिथि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान श्री सुदर्शन शर्मा जी होंगे। आर्य बन्धुओं यदि वास्तव में आप वैदिक धर्म का प्रचार घर-घर तक पहुंचाना चाहते हैं तो आप अपने परिवार तथा इष्ट मित्रों सहित इस कार्यक्रम में पधार कर आर्य समाज के प्रचार-प्रसार से मानव जाति को लाभान्वित करें। कार्यक्रम के पश्चात आर्य समाज आर्य नगर की ओर से भव्य ऋषि लंगर का आयोजन किया जाएगा।

-वेद आर्य महामन्त्री आर्य समाज

आर्य समाज, खलासी लाईन का 60वां वार्षिक उत्सव

60वाँ वार्षिकोत्सव के अवसर पर आर्य समाज खलासी लाईन के प्रांगण में विशेष यज्ञ हुआ। मुख्य यजमान सुधीर पंवार, राजेन्द्र आर्य, नरेन्द्र कौशिक, सुभाषचन्द सपत्नी रहे। यज्ञ आचार्य योगेन्द्र याज्ञिक एवं ब्रह्मदेव जी के संयुक्त पुरोहित्य में हुआ। कार्यक्रम की अध्यक्षता डा० अशोक कुमार जी ने की। मंच संचालन करते हुए डा० पूर्णचन्द्र शास्त्री जी ने आर्य शिक्षा निकेतन के बच्चों को सम्बोधित करते हुए कहा-देव यज्ञ विद्वान ही है। अत: विद्वानों को बहुत गम्भीरता से सुनने की उन्होनें बच्चों को प्रेरणा दी। यजमानों को आशीर्वाद आचार्य योगेन्द्र याज्ञिक जी ने दिया। तत्पश्चात् नई दिल्ली से पधारी वैदिक विदुषी श्रीमति सुदेश आर्या भनजोपदेशिका जी ने गायत्री मंत्र, गुरूमंत्र से भजनो का प्रारम्भ करते हुए कहा-प्रभु मेरे मन में मेरा अधिकार कर दो, भंवर में है नैय्या इसे पार कर दो, प्रभु मेरे जीवन का उद्धार कर दो।

वैदिक भजनोपदेशक श्री भानुप्रकाश सिंह जी ने आर्य शिक्षा निकेतन के बच्चों को सम्बोधित करते हुए कहा कि ईमानदारी, सत्यता, धार्मिकता, सभ्यता, त्याग का जब तुम आचरण करोगे तभी तुम्हारे जीवन में सफलता आयेगी। उन्होनें देशभक्ति से ओतप्रोत भजनों को सुनाकर बच्चों को राष्ट्रीयता, देशभक्ति व धार्मिकता के लिये प्रेरित किया। उन्होने महर्षि दयानन्द का उदाहरण देते हुए भजनो के माध्यम से बताया ''कोई जहर पिलाए, कोई ईंट बरसाए राह में, योगी पग-पग बढ़ता गया, ऋषि अलबेला सारे जग में अकेला, पग-पग बढ़ता गया'' उन्होने महर्षि दयानन्द जी का उदाहरण देकर भजनो के माध्यम से बच्चों में प्रेरणा के भाव भरे और कहा विद्वान हर कोई नहीं बन सकता। धार्मिक तो सबको बनना ही चाहिये। उन्होंने कहा शक्ति है और धर्म नहीं है तो दूसरे को परेशान ही करोगे। तत्पश्चात् शांतिपाठ के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ और उपस्थिति निम्न रही।

स्त्री आर्य समाज महर्षि दयानन्द बाजार लुधियाना की गतिविधियां

स्त्री आर्य समाज देव दयानन्द के मिशन को आगे ले जाने के लिए संकल्पबद्ध है। प्रतिवर्ष की भांति 14 जनवरी को मकर संक्रान्ति पर्व मनाया गया जिसमें श्री उपेन्द्र आर्य को बुलाया गया। महर्षि दयानन्द का जन्मदिवस , शिवरात्रि पर्व, आर्य समाज स्थापना दिवस, स्वामी स्वतन्त्रानन्द का जन्मदिवस मनाया गया। स्त्री आर्य समाज गरीबों के यथाशक्ति दान देकर हर प्रकार से सहायता करती रहती है। गरीब लड़कियों की शादी तथा गरीब बच्चों की पढाई के लिए हर प्रकार से अपना योगदान देती रहती है। सिविल लाईन दण्डी स्वामी के पास ग्रीन पार्क में यज्ञ समिति की ओर से प्रति सप्ताह यज्ञ का आयोजन नियमित चल रहा है। स्त्री आर्य समाज की ओर से उसमें भी हरसम्भव सहयोग दिया जाता है।

देवता

-ले० स्वर्गीय श्री शान्तिस्वरूप गुप्त

शकल के पुत्र विदग्ध नामा ऋत्विक् ने याज्ञवल्क्य से प्रश्न किया कि 'देवता कितने हैं।' याज्ञवल्क्य ने कहा-

'३३०६ देवता हैं।' विदग्ध ने पुन: वही प्रश्न दोहराया-'देवता कितने हैं ?' याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया 'छह'। विदग्ध ने यही प्रश्न पुन: दोहराया-'देवता कितने हैं ?' याज्ञवल्क्य ने कहा-तीन।' फिर पूछा तो याज्ञवल्क्य ने क्रमश: दो तथा एक बताये। विदग्ध कहने लगे-'भगवन् ! ३३०६ कौन हैं ?' याज्ञवल्क्य कहने लगे-'देवता वास्तव में ३३ ही हैं। इन्हीं की महिमा का वर्णन करने के हेतु इनकी संख्या ३३०६ बतायी गयी है।' विदग्धने प्रश्न किया-'३३ देवता कौन-कौन से हैं ?' याज्ञवल्क्य कहने लगे-'८ वसु, ११ रुद्र, १२ आदित्य, १ इन्द्र तथा १ प्रजापति ही ३३ देवता हैं। इनमें से अग्नि पृथ्वी, वायु, अन्तरिक्ष, आदित्य, द्यौ, चन्द्रमा और नक्षत्र-गण का नाम चराचर को वास देने के कारण वसु पड़ा।

५ प्राण (प्राण, अपान, समान, व्यान, उदान), ५ उपप्राण (नाग, कूर्म, देवदत्त और धनंजय) तथा १ मन का नाम एकादश रुद्र है। जब पुरुष के शरीर से मृत्यु के समय ये प्रयाण करते हैं व संबंधी-गण रुदन करते है तब रुलाने वाले होने के कारण इनकी रुद्र संज्ञा है। बारह मास ही आदित्य हैं। ये मास पुन: पुन: आवर्त्तन करते हुए मनुष्य की आयु को क्षीण करते हैं। मेघ का ही नाम इन्द्र है। वर्षा से अन्नादि की उत्पत्ति के द्वारा ही मनुष्यों को ऐश्वर्य प्राप्त होता है। उसमें सहकारी होने से अशनि (मेघ-गर्जन) की भी इन्द्र संज्ञा है, जिसके द्वारा प्रजा की रक्षा होती है। कुछ परमात्मा या यज्ञ को तथा पशु आदि यज्ञ के साधनों (घृत आदि) को भी प्रजापति कहते हैं। इस प्रकार कुल ३३ देवता हैं। अग्नि, पृथ्वी, वायु, अंतरिक्ष, आदित्य और द्यौ ही छह देवता हैं। अग्नि, वायु, आदित्य ही तीन देवता हैं। अन्न और प्राण सब के जीवन के हेतु होने से शेष सब देवताओं का इन्हीं दो में अंतर्भाव हो जाता है। वायु ही अध्यर्ध देवता हैं। सब चराचर इसी से वृद्धि को प्राप्त होते हैं इसीलिये इसको अध्यर्ध कहते हैं। इनकी संख्या का हिसाब नहीं है। प्राण या ब्रह्म ही एक देवता है क्योंकि यही सब देवों का देव और प्राणिमात्र को प्राणन-रूपी चेष्टा देने वाला है।

-संकलनकर्त्ता : मृदुला अग्रवाल 19 सी. सरत बोस रोड, कोलकाता

स्त्री आर्य समाज महर्षि दयानन्द बाजार का चुनाव

स्त्री आर्य समाज दाल बाजार लुधियाना का चुनाव 2-4-2014 को जिला आर्य सभा लुधियाना की प्रधाना श्रीमती राजेश शर्मा की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। श्रीमती राजेश शर्मा जी ने प्रधाना पद के लिए नाम प्रस्तुत करने को कहा। सभी ने सर्वसम्मति से श्रीमती इन्द्रा शर्मा के नाम का अनुमोदन किया तथा उन्हें अपना मन्त्रीमण्डल बनाने का अधिकार दिया गया। सभी बहनों ने ताली बजाकर इन्द्रा शर्मा जी का स्वागत किया। श्रीमती इन्द्रा शर्मा जी बहुत ही सुयोग्य महिला हैऔर गुरूकुल देहरादून की स्नातिका है। प्रधाना जी ने अपने अधिकारों का प्रयोग करते हुए जनक रानी आर्या को मन्त्राणी श्रीमती नीलम थापर को कोषाध्यक्ष पद के लिए चयनित किया। सभी बहनों से सहयोग की कामना की गई।

-जनक रानी आर्या मन्त्राणी स्त्री आर्य समाज

प्रान्तीय योग व्यायाम प्रशिक्षण शिविर व व्यक्तित्व निर्माण शिविर

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित संगन आर्य समाज की युवा ईकाई आर्यवीर दल राजस्थान का प्रान्तीय योग व्यायाम प्रशिक्षण व व्यक्तित्व निर्माण शिविर मेवाड़ भूमि के पवित्र शान्त प्रदूषण मुक्त वातावरण से युक्त विद्या कालेज पालड़ी भीलवाड़ा में दिनांक 25-5-2014 से 1 जून 2014 तक आयोजित किया जा रहा है। इस शिविर में स्वास्थ्य रक्षा के लिए योग, आसन प्रणायाम, दण्ड बैठक, सूर्य नमस्कार तथा आत्मिक उन्नति के लिए सुयोग्य शिक्षकों तथा विद्वानों के द्वारा ज्ञान यज्ञ संगीत एवं बौद्धिक प्रशिक्षण दिया जाएगा। शिविरार्थी की आयु 13-14 वर्ष तथा पूर्णरूपेण स्वस्थ हो। परीक्षा परिणाम पत्र, बौद्धिक पाठ्क्रम तथा प्रान्तीय कोष के लिए प्रति शिविरार्थी प्रवेश शुल्क 400/- रूपये देना अनिवार्य है। प्रत्येक शिविरार्थी को 24 मई सायं 5 बजे तक शिविर स्थल पहुंचना अनिवार्य है।

-रामकृष्ण छाता आर्य समाज भीलवाड़ा

वेद वाणी

हम सत्यवादियों की शरण में रहें

ऋतावान ऋतजाता ऋतावृधो घोरासो अनृतद्विषः।
तेषां वः सुम्ने सुच्छर्दिष्टमे नरः स्याम ये च सूरयः॥

-ऋक्० ७/६॥२३

विनय-*हे आदित्यो! हम अब तुम्हारे 'सुम्न' में रहना चाहते हैं, तुम्हारे सुख व ऐश्वर्य में बसना चाहते हैं। अभी तक हम तुम्हारी महिमा नहीं जानते थे, तुमने जो अखण्ड ब्रह्मचर्य धारण करके दिव्य प्रकाश प्राप्त किया है और आदित्य बने हो, उसका सामर्थ्य नहीं समझते थे। तुम तो इस संसार के 'नर' हो, नेतृत्व करने वाले हो। तुम संसार-नेता यदि हमें अपनी शरण प्रदान करोगे तो हम अवश्य कृतकृत्य हो जाएंगे, परन्तु हम तुम्हारी इस सर्वश्रेष्ठ सुखमय शरण को तभी प्राप्त कर सकेंगे जब हम सत्यसेवी हो जाएंगे। हम जानते हैं कि तुम कितने भारी 'ऋत' के उपासक हो और कितने घोर 'अनृत' के विरोधी हो। तुमने जो इतना ऊंचा पद प्राप्त किया है उसका रहस्य यही है कि तुमने अनन्यभाव से सत्य का सेवन किया है। जब कोई मनुष्य सत्य का आराधन शुरू करता है तो सबसे पहले यज्ञ के, त्याग के महान् सत्य सिद्धान्त का प्रकाश हो जाता है, इसलिए 'ऋत' शब्द यज्ञ का भी वाचक हो गया है। तुम न केवल सत्य व यज्ञ से पूर्णतया युक्त हो, 'ऋतावान्' हो, अपितु तुम तो 'ऋतजात' भी हो, तुम ऋत से उत्पन्न हुए हो, तुमने अपने-आपको बिल्कुल बदलकर सत्य में अपना दूसरा जन्म प्राप्त किया है, तुम्हारा अणु-अणु सत्य का बना हुआ है, यज्ञभावना से भावित है और अब तुम्हारा जीवन सत्य के ही बढ़ाने में लगा हुआ है। तुम 'ऋतावृध्' हो। अनृत को हटाकर निरन्तर सत्य की वृद्धि कर रहे हो। इसलिए तुम अनृत के घोर शत्रु हो। अनृत के साथ तुम्हारा सहज वैर है। जहां तुम हो वहां अनृत नहीं ठहर सकता। तुम अनृत की छाया तक को नहीं सहन कर सकते। इसलिए हे नरो! हम भी अब सत्यसेवी होकर ही तुम्हारे 'सुम्न' को प्राप्त करना चाहते हैं, तुम्हारे सर्वश्रेष्ठ शरणतम सुख को प्राप्त करना चाहते हैं। हम ही नहीं किन्तु हमारी तरह और भी जो कोई तुम्हारी इस महिमा को जानते हैं, जो 'सूरि' व ज्ञानी हुए हैं, उन सबको, हे आदित्यो! उन सबको तुम अपना सुख प्राप्त करवाओ, सर्वश्रेष्ठ शरण देने वाला अपना महान् सुख प्राप्त कराओ।*

साभार वैदिक विनय, प्रस

दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय में प्रवेश

विगत 128 वर्ष से प्राचीन गुरुकुल परम्परा पर आधारित वैदिक साहित्य की शिक्षा देने वाली संस्था दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार है। भोजन, पुस्तकें आदि आवश्यक वस्तुएं नि:शुल्क दी जाती है। डी.ए.वी. कॉलेज प्रबन्धकर्त्री समिति नई दिल्ली द्वारा संचालित और पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़ से मान्यता प्राप्त संस्था है। इस संस्था ने हजारों की संख्या में वैदिक विद्वान, लेखक, आचार्य, आर्य समाज के संगठनकर्ता दिये है। जो देश विदेश में प्रशंसनीय कार्य कर रहे हैं।

जुलाई मास में प्रवेश होता है। प्रवेशार्थी छात्र न्यूनतम दसवीं पास या इसके समकक्ष परीक्षा पास होना चाहिए। तीन से चार वर्ष का पाठ्यक्रम है। स्नातक बनने पर छात्र को विद्या वाचस्पति की उपाधि से अलंकृत किया जाता है। अधिक जानकारी के लिए हमारी वेबसाइट खोलकर देखें।

वेबसाईट : www.dnbmhisar.com
दूरभाष : 01662-231920
मोबाइल : 094165-44775 प्राचार्य

गुरूकुल का आयुर्वेद महान
घर-घर में मिले रोगों से निदान

गुरुकुल च्वयनप्राश
सभी के लिए स्वादिष्ट, रुचिकर, पौष्टिक रसायन।

गुरुकुल पायोकिल
पायोरिया की आयुर्वेदिक औषधि
दांतों में खून रोके, मुंह की दुर्गन्ध दूर करे, मसूड़ों के रोग, ढीले दांत ठीक करे।

गुरुकुल शतशिलाजीत सूर्यतापी
पुष्टीदायक, बलवर्धक
शरीर में नया खून और उत्साह का अनुभव

गुरुकुल मधु
गुणवत्ता एवं ताज़गी के लिए

गुरुकुल चाय
खाँसी, जुकाम, इन्फ्लूएंजा व थकान में अत्यंत उपयोगी।

गुरुकुल ब्राह्मी रसायन
बुद्धिवर्धक, स्फूर्तिदायक, दिमागी कमजोरी दूर करे।

गुरुकुल मधुमेह नाशिनी गुटिका
मधुमेह एवं प्रत्येक प्रकार के प्रमेह में लाभदायक

अन्य प्रमुख उत्पाद
गुरुकुल द्राक्षारिष्ठ
गुरुकुल रक्तशोधक
गुरुकुल अश्वगंधारिष्ट

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार डाकघर : गुरकुल कांगड़ी-249404, ज़िला-हरिद्वार (उत्तरांचल) फोन : 0134-416073

शाखा कार्यालय : 63, गली राजा केदार नाथ, चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-6, फोन : 23261871

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा आर. के. प्रिंटर्स प्रैस, टाण्डा फाटक जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। E-mail: apspunjab2010@gmail.com
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।